शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 दिसम्बर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

पंचायतीराज प्रणाली: वैदिक और वनवासी समानताएँ

डॉ. सुरेश काग
सहायक प्राध्यापक
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा
गिरधारीलाल भालसे (शोधार्थी)
राजनीति विज्ञान
देवी अहिल्या विश्वविद्यालय
इंदौर, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

भारत ग्राम्य संस्कृति प्रधान देश है। यहाँ व्यक्तिगत और सामाजिक स्वातंत्र्य प्राचीनकाल से रहा है। ग्राम सञ्चालन के लिए राज्य व्यवस्था से बिल्कुल स्वतंत्र व्यवस्था रही। इसके परिणामस्वरुप यहाँ के गावों का पूर्ण विकास हुआ। वैदिककालीन संस्कृति को आरण्यक संस्कृति के नाम से भी जाना जाता है। प्रस्तुत शोध पत्र में वर्तमान पंचायती राज प्रणाली के परिप्रेक्ष्य में वैदिक और वनवासी समानताओं को देखा गया है।

प्रस्तावना

भारत में पंचायतीराज व्यवस्था का अस्तित्व लगभग चार हजार वर्ष पुराना है। प्राचीन राजतन्त्रों से लेकर अर्वाचीन प्रजातन्त्र पर्यन्त राजनैतिक व्यवस्थाओं में किसी न किसी रूप में पंचायतों का अस्तित्व रहा है। उनके कार्य एवं उनकी उपादेयता से भारत का जनमानस सदा से ही परिचित रहा है। देष में राजतंत्र से लेकर मुगलकाल तथा ब्रिटिषकाल से लेकर लोकतंत्र तक सभी कालखण्डों में पंचायतों का प्रचलन अवश्य रहा है। पंच और पंचायत व्यवस्था श्वास-प्रश्वास की तरह भारतीय वातावरण में घुली-मिली हुई है।

वैदिक मान्यताएँ तथा पंचायत राज -

ऋग्वेद के दसवें मंडल की ऋचा में वैदिक ऋषि ने इच्छा प्रकट की है कि सभा समिति के लोग साथ-साथ चलें, एक साथ बात करें, एक-दूसरे के मन को जानें, उनका निश्चय समान हो, हृदय समान हो, मन समान हो जिससे समाज सुखी रहे। ठीक इसी तरह 'आदि' की सियांग में एक परिषद 'केबांग' की बैठक में उद्घोष है - 'हे ग्रामीणों और भाईयों, हम अपनी परंपराओं और परिषद् को सशक्त बनाएं, अपने नियमों को सुधारें, अपने कानूनों को सीधा और सभी के लिए बराबर बनाएं। हमने एक परिषद् बैठक बनाई और और हम लोग एक स्वर में बोलेंगे और निर्णय देंगे।'

संगच्छध्वं, संवद्ध्वं संवोमनांसि जानतामा
समानी व आकुतिः समाना हृदययानि वः।
समानमस्तु वो मनो, यथा वः सुसहासति।।

ऋग्वेद के अनुसार सभा समिति के लोग साथ-साथ चलें, एक साथ बात करें एवं एक-दूसरे के मन को जानें, उनका निश्चय समान हो, हृदय

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 दिसम्बर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

समान हो, मन समान हों जिससे समाज सुखी रहे।

उत्तर पूर्व सीमान्त क्षेत्र (नेफा) में भी आदिवासी परिषदें शताब्दियों से काम करती चली आ रही हैं। यह अनौपचारिक संस्थाएं सामाजिक एवं दैविक सम्मति प्राप्त हैं। इनमें से मोनपा परिषदें या 'आदि' की 'बांगो' परिषदें स्वयं अत्यंत संगठित सामुदायिक भावना और एकता बोध से संचालित अत्यन्त लोकप्रिय संस्थाएं हैं। 'आदि' की सियांग में एक परिषद 'केबांग' की बैठकें इस प्रारंभिक उद्धरण के साथ शुरू होती हैं - 'हे ग्रामीणों और भाईयों, हम अपनी परंपराओं और परिषद् को सशक्त बनाएं, अपने नियमों को सुधारें, अपने कानूनों को सरल और सभी के लिए समान बनाएं। वे नेता जो सबसे अच्छा बोल सकते हैं, खड़े हों और हमारी बेहतरी के लिए बोलें, वे निर्भय, निस्संकोच और निर्द्वन्द्व स्वर में ऐसे बोलें जैसे मुर्गा बोलता है। हमारे कानून एक-से हों, हमारी प्रथाएं सभी के लिए समान हों, हम अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग तरीके से फैसले न लें, हम तर्क के आधार पर चलें, देखें कि न्याय हो और देखें कि ऐसे समझौते पर पहुंचें जो दोनों पक्षों को स्वीकृत हो, हम कुछ भी लंबित नहीं रखें, हम तब तय करें जब विवाद ताजा हो न कि तब जब छोटे विवाद बड़े हो जाएं और एक लंबे समय तक चलते रहें। दंड शुल्क भी तार्किक तरीके से आरोपित हों, वह अपराध के समक्ष हों और न्यायपूर्ण हों, दरिद्रता पर करूणा हो और न्याय में दया। कौटिल्य का अर्थषास्त्र मौर्यकाल में प्रचलित ग्रामीण प्रषासन की व्यवस्था का विस्तृत विवरण प्रदान करता है। कौटिल्य के अनुसार प्रत्येक ग्राम का शासन प्रथक-प्रथक होता था। ग्राम के शासन प्रमुख को ग्रामीण कहते थे। कौटिल्य का मत था कि 10 ग्रामों के मध्य संग्रहण 200 ग्रामों के मध्य ग्रामीण नामक ग्राम की स्थापना की जानी चाहिए।

वनवासी मान्यताएँ तथा पंचायत राज

आसाम में गारों गांवों में काम करने वाली आदिवासी परिषदें लोगों के आपसी विवादों और मतभेदों का निराकरण करती थीं। वे शांति व्यवस्था बनाए रखने का काम करती थीं और साधारण आदिवासी तरीकों से विवादों का निपटारा करती थी। खासी आदिवासियों में एक 'दरबार' नामक परिषद् होती है जिसमें गांव के सारे वयस्क पुरूष शामिल होते हैं। ये दरबार गांव के सारे सामाजिक और प्रषासनिक कार्यों को निर्देषित करते हैं। उनके निर्णय उनके क्षेत्राधिकार के भीतर रहने वाले सभी पर लागू होते हैं। अवज्ञा का अर्थ दंडषुल्क या ग्राम से निष्कासन भी है। आंध्रप्रदेश में कोया आदिवासियों की अपनी पारंपरिक पंचायतें थीं उन्हें कुल पंचायत कहते थे। 'ग्राम' प्रशासन की इकाई था जिसका प्रमुख 'पिन्ना पेड्डा' वंषानुगत उत्तराधिकारी तो होता था लेकिन उसे ग्राम वृद्ध चुनते थे। ग्राम वृद्ध किसी नाबालिग या अक्षम व्यक्ति को न चुनकर किसी अन्य को प्रतिनिधि की तरह भी चुन सकते थे। उसके ऊपर एक कुल पेड्डा या पटेल भी होता था जिसका वंषानुगत मुंसिफ जैसा पद शासन द्वारा मान्य किया जाता था। 10-12 गांवों के समूहों को समुतू कहते थे। जिसे समुतू दोरा, कुलु दोरा या पेड्डा कापु नामक परिषद् अध्यक्ष अपने सहकर्मियों की सहायता द्वारा संचालित किया जाता था। पिन्ना पेड्डा या कुल पेड्डा या पटेल के निर्णयों के विरूद्ध अपील समुतू द्वारा सुनी जाती थी। दंड शुल्क पटेल या पिन्ना पेड्डा पर भी लगाया जा सकता था। दंड शुल्क (टप्पू) तीन तरह के थे जो समुदाय (कुल) को

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 दिसम्बर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

देय हों, जो धार्मिक प्रमुख (गुरू) को देय हों और जो राज्य के प्रमुख (राजा) को देय हो। प्रायः राजा के न हो सकने से शुल्क 'कुल' को चले जाते थे और उनका उपयोग सामूहिक रूप में होता था। यदि दंडषुल्क नहीं दिया जाता तो उसका परिणाम सामाजिक बहिष्कार में होता था। यह परंपरा कोया आदिवासियों में आज तक जीवित चली आई है।

उड़ीसा में 'हो' आदिवासियों द्वारा पंचायत में राष्ट्रपति प्रणाली-सी अपनाई गई लगती है। वहां 'हो' एक क्षेत्र-विशेष के गांवों से 'मोरांग गोन्का' नामक अध्यक्ष चुनते हैं जिसे जाति की धार्मिक और सामाजिक प्रथाओं को नियमित करने के लिए अन्य 'प्रमुख' लोग मदद करते हैं। इन प्रमुखों की परिषद् बैठकर धार्मिक उत्सवों, विवाहों, नृत्यों और त्यौहारों की तिथि और व्यवस्था तय करती है। वैवाहिक विवादों को सुनती है और दंड भी अधिरोपित करती है। साठ के दशक में इसने दहेज प्रथा खत्म करने और साक्षरता के लिए भी कार्य किया। मारंग गोन्का और प्रमुखों के पद आनुवंषिक नहीं हैं, वे जनता के बीच इनकी सतत लोकप्रियता और प्रभाव पर निर्भर करते हैं।

गौंड शासकों के अनुसार

गोंडवाना के अंतर्गत मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश और उड़ीसा के क्षेत्र आते थे। गोंड शासकों ने भले ही एक शक्तिशाली केन्द्रीय सत्ता की स्थापना की हो लेकिन उनकी ग्रामीण स्वायत्तता ने अध्येताओं का ज्यादा ध्यान आकर्षित किया। विदर कोस्टल ने लिखा है - बहुत शुरू से ही गांव स्वायत्त इकाइयों के रूप में गठित किए गए थे। इस क्षेत्र में पंचायत प्रणाली की एक अखंड निरन्तरता थी और स्पष्ट है कि शायद मराठा छापों के समय के अपवाद को छोड़, ग्राम स्तर पर विकास की प्रक्रिया में या तो कोई व्यवधान नही हुआ या बहुत अल्प व्यवधान हुआ। यहां तक कि जब साम्राज्य गठित हुए तो भी घटक इकाइयों की स्वायत्तता प्रभावित नहीं हुई।

सी.यू. वेलिस ने भी स्वीकार किया है कि गोंडों की प्रषासन पद्धति निचले स्तर से होने वाला प्राकृतिक विकास था और अपने स्वरूप में जनतांत्रिक था। पंचायतों ने प्रत्येक स्तर पर गोंड प्रमुखों की स्वेच्छाचारी शक्तियों को सीमित किया था। राजस्थान में 13 से 15वीं शताद्धी के बीच के अनेक अभिलेख 'पंचकुल' ग्रामों में विभिन्न कार्यो जैसे - संपदा, भूमि, सीमांकन आदि के विवाद सुलझाने तथा कर एकत्र करना आदि का उल्लेख मिलता है। पंचकुल मंे पांच या पांच से अधिक षिष्ट व्यक्ति होते थे, इनके निर्णयों को स्थानीय औरा राज्य की मान्यता थी। इन पंचकुलों में एक या कर्णिक (राजकीय अधिकारी) थे जो राज्य का प्रतिनिधित्व करते थे।

इस प्रकार पंचायतराज संस्था राज्य द्वारा और प्रजा द्वारा प्रमाणित समझी जाती थी। गांवों, कस्बों और मंडियों की व्यवस्था मण्डपिकाएं करती थीं। ये संस्थाएं राजकीय, सार्वजनिक और स्थानीय निकायों के लिये कर एकत्र किया करती थीं।

राजस्थान में गांव की 'कामन्स' सामलात देह कहलाती थी। चूंकि वह पूरे गांव की सम्मिलित देह थी, उसका प्रबंधन भी सम्मिलित और अलिखित नियमों से शासित था।

ग्रामवासी सामलात देह से वृक्ष अथवा कोई भी दूसरी जरूरी उपज लेने के लिए बैठक की तिथि या समय तय करते थे। उस तिथि को सम्पूर्ण ग्रामसभा मुद्दों पर सोच विचार कर निर्णयों को अंतिम रूप देती थीं। देवओरण, कांकड़बनी, बाल, रखतबनी जैसी बैठकों - जगहों में पशुओं की

ISSN 2320 – 0871
17 दिसम्बर 2015

चराई से लेकर अनेक बिन्दुओं पर फैसले होते थे।

निष्कर्ष

वर्तमान समय में पंचायत राज प्रणाली का स्वरूप कैसा भी हो किन्तु पूर्व से प्रचलित सामाजिक प्रथाएँ एवं कानून ग्रामीण विचारधारा का एक महत्वपूर्ण अंग है। ग्रामीण आज भी इन मान्यताओं को अपनाए हुए है। देश में खाप पंचायतों का प्रचलन महत्वपूर्ण उदाहरण है। दिल्ली के विभिन्न हिस्सों - भांगड़ा, होशियारपुर, फीरोजपुर, हिसार, गुरदासपुर, सिरसा, झंग, गुजरावल आदि के आदि के अतिरिक्त देष में ग्रामीण जनमानस प्राचीन पंचायत संबंधी प्रथाएँ आज भी विद्यमान है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. त्रिपाठी रमाशंकर, प्राचीन भारत का इतिहास, 1962 - पृष्ठ - 82

2. सत्यकेतु विद्यालंकार, प्राचीन भारतीय शासन और समाजशास्त्र, पृष्ठ- 202

3. पंचायिका, पंचायतों की मासिक पत्रिका, मार्च 2015, पृष्ठ 45

4. पंचायिका, पंचायतों की मासिक पत्रिका, मार्च 2015, पृष्ठ 46